ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-3* Issue-3*April- 2018
Innovation The Research Concept

महाकाव्य का मुख्य उद्देश्य

सारांश

प्रस्तुत महाकाव्य में सीता केवल करणा की पात्र नहीं हैं वह पतिव्रता पत्नी का आदर्श मात्र ही नहीं है बल्कि वह एक महान् स्त्री है जो मावनता के कल्याण के लिए अपने समस्त सुखों के साथ–2 अपना जीवन भी त्यागने के लिए तैयार हैं। भगवान राम के राज्य सिंहासन के आधे भाग पर विराजमान होकर भी जनापवाद के कारण स्वयं ही कौशल्या आदि माताओं और राम को अभिवादन करके लक्ष्मण द्वारा चालित रथ से अयोध्या नगरी को छोड़कर वन के लिए प्रस्थान करती हैं।

सीता कोई साधारण स्त्री न होकर महामुनियों के रक्त से समुद्भूत दिव्य ज्योति हैं। महायोगी विदेहराज में प्राप्त विनय और माता पृथ्वी से प्राप्त रत्नरूपदेह की साकार प्रतीक है। योग विजा के कारण समस्त प्राकृतिक कष्टों को सहने में समर्थ है। ग्रहस्थ आश्रम में रहते हुए वधुभाव से सबको यथोचित आदर सम्मान देते हुए अपनी इच्छा से पति के साथ वन जाकर पतिव्रत धर्म का पालन करती हैं तथा पति द्वारा जनहित के लिए प्राप्त वनवास को सहर्ष स्वीकार कर लेती हैं।

जयनन्दिनी सिंह
शोध छात्रा,
संस्कृत विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
झालावाड़, राजस्थान

अल्का बागला
व्याख्याता,
संस्कृत विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
झालावाड़, राजस्थान

मुख्य शब्द : सहस्त्राब्दियाँ, शालती, प्रश्नव्यूहों, चिन्तनशरों, नारीविमर्श, भद्रासन, परूषवाणी, निश्चेष्ट, मूर्च्छित, भवदभीप्सिता, विशल्यतां, स्पृहागुरूः, मनुमन्यतान्तमाम्, विक्रिया, आप्यायित, यार्मिमातर, सुमानुषा, याम्यहं, शैत्यतो, लधुकलेवर, फलश्रति, राष्ट्रदेवी, संक्रमणकाल, नवोन्मेषशालिनी, स्वमत्यानुसारेण, उन्मीलित, श्लाधनीय, उकेरा

प्रस्तावना

विदेहराजजनकनन्दिनी, मिथिलानरेश की पुत्री, आयोध्यानरेश की पुत्रवधू, राजाराम की राजमहिषी, राम की अनन्यस्वरूपा, अनिन्द्य–सुन्दरी पुथ्वी से जायमान सीता समस्त आर्यात्रत (भारतभूमी) की उत्कृष्ट स्त्रीरत्न हैं। लेकिन उनकी उत्पत्ति तथा निर्वासन दोनों ही भारतीय ऐतिह्य में अद्यतन अन्वेषण का विषय बना हुआ है और यह अनुसन्धान अधुनातन जारी हैं।

पुरा इतिहास चतुर्विंशति साहस्त्री (वाल्मीकि–रामायण) रामचरितमानस, रामानन्दसागर, निर्मित टेलीविजन पर प्रसारित धारावाहिक रामायण के माध्यम से भारत के हर प्रान्त तथा हर धर्मावम्बियों, बालक, युवा, वृद्ध (नर–नरी) सभी के अर्न्तमन में बसी सीता एक ऐसा चरित्र है, जिसकी उत्पत्ति, विवाह, चौदहवर्ष वनवास, रावण द्वारा अपहरण, पौल्सत्यगृह में निवास, अग्निपरीक्षा, राम द्वारा निर्वासन, धरती में समाहित होना जिसके भाग्य के विपरिणाम में हर्ष एवं दुःख का विचित्र समन्वय है। किन्तु पतिपरायण सीता का राम द्वारा निर्वासन इतना क्रूर एवं ह्रदयविदारक है कि सहस्त्राब्दियाँ व्यतीत हो जाने पर भी उनके निर्वासन (परित्याग) का प्रश्न अर्न्तमन को सदा व्यथित करता है। एतद् विषयक जिज्ञासाएँ हमें अधुनातन शूल बनकर शलती हैं, शर बनकर बेधती हैं, हमें गैर संस्कृतिवादियों के प्रश्नव्यूहों में ला खड़ा करती हैं, नारीवादी चिन्तकों के चिन्तनशरों से उद्वेलित करती हैं, हर बुद्धिजीवी के मस्तिष्क में प्रश्नचिन्ह उबरता है, दार्शनिकों, मनीषियों द्वारा नाना प्रकार के तर्क उपस्थित किये जाते हैं। सीता निर्वासन पर उठे नाना विप्रतिपत्तियों का समाधान प्राच्यमहाकवियों ने अपनी नवीन उद्भावनाओं के द्वारा अपने महाकाव्यों और नाटकों में नहीं किया है। बल्कि पौरस्त्य महाकवियों ने सीता के चरित्र को आरेखित करने में वाल्मीक के ही पदन्यास का अनुकरण किया है

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में काव्य, नाट्य, कथा एवं समीक्षाग्रन्थों को अपनी पारखी दृष्टि व नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा, अर्थगाम्भीय व पदलालित्य से उत्कृष्टता के शिखर पर पहुंचाने वाले महामहोपाध्याय रेवाप्रसाद द्विवेदी के महाकाव्य को सुधी पाठकों के समक्ष रखना ही मेरा मुख्य उद्देश्य हैं।

यथाः–रघुवंश, जानकीहरण, रावणवध, अनर्घराधव, उदात्तराघव, कुन्दमाला इत्यादि नाटकों एवं महाकाव्यों में किसी भी महाकवि ने सीता निर्वासन के विषय में सर्वथा नवीन मौलिक उद्‌भावनाएं नहीं की है ना ही अपनी कल्पना शक्ति से कोई परिवर्तन करने का उपक्रम किया है। इसका कारण जहॉ तक मेरी समझ में आता है शायद प्राच्यकवियों की दृष्टि नारीवादी चिन्तन के प्रति उदासीन रही है। कवियों को तद्‌युगीन सामाजिक चेतना के अनुरूप नायिका का अबला, भीरू, करूणक्रन्दन करने वाली, सर्वसाहा वाला रूप ही अतिशय प्रिय रहा है। यही कारण है कि महाकवियों ने वैदिक कालीन तेजस्वी नारियों (गार्गी, अपाला, मैत्रेयी) के चरित्र को उपजीव्य बनाकर ग्रन्थों का प्रणयन नहीं किया है। जबकि अधिुनिक युग नारीविमर्श (नारीवादी चिन्तन का युग) का काल रहा है। अतः इस युग में मैत्रेयी के चरित्र को लेकर 'श्री कृष्णा लाल जी' ने 'मैत्रेयी नाटक' 'ब्रह्म देव शास्त्री जी' ने 'सावित्री' 'राजेन्द्रमिश्र' ने 'विद्योतमा' आदि नाटकों का प्रणयन किया हैं। 'राम जी उपाध्याय' ने अपने संस्कृत नाटक' सीता अभ्युदयम्' में सीता को एक उच्च शिक्षिता, तेजस्विनी नारी के रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्राच्य कवियों की दृष्टि नारी के प्रति सापेक्ष नहीं वरन् निर्पेक्ष रही हैं।

लेकिन संस्कृत साहित्य के इतिहास में यह बहुत गौरव का विषय है कि 19वीं, 20वीं शताब्दी में 'रेवाप्रसाद द्विवेदी' द्वारा प्रणीत 'उत्तरसीताचरीत' तथा 'अभिराजराजेन्द्र मिश्र' द्वारा रचित 'जानकी जीवनम्' महाकाव्य में दोनों महाकवियों ने सीता निर्वासन के प्रंसग को अपने महाकाव्यों में सर्वथा नवीन रूप में प्रस्तृत किया हैं। अपनी दिव्य कवित्व प्रतिभा से नवीन परिकल्पनाएं की है तथा उसके चारित्रिक सौष्ठव को नव्यता, दिव्यता प्रदान की है। यद्यपि महाकाव्य की कथावस्तु किसी सज्जन पुरूष अथवा महापुरूष पर आधारित होती है और उसके माध्यम से ही मानव जीवन की समग्रता का चित्रण इसमें किया जाता हैं। महाभारत के नामकरण के विषय में यह मत प्रकट किया गया है कि "भरत वाच्यम महाभारतम मुच्यते" अर्थात् भरतों की महत्ता के कारण ही इसके महाभारत कहा जाता है। इससे स्पष्ट है कि महाकाव्य में किसी महान् पुरूष की कथा को ही आधार बनाया जाता है। भामह ने 'सदाश्रय' और विश्वनाथ ने 'सज्जनाश्रय' कहकर इस मत की पुष्टि की है। सीता चरितम् महाकाव्य की कथावस्तु महापुरूष पर आधारित न होकर महान् स्त्री के चरित्र से सम्बंधित हैं। सीता यह केवल करूणा का पात्र नहीं है। वह पतिव्रता पत्नी का आदर्श मात्र ही नहीं है बल्कि वह एक महान् स्त्री है जो मानवता के कल्याण के लिए अपने समस्त सुखों के साथ–साथ अपना जीवन भी त्यागने के लिए तैयार है। भगवान राम के राज्य सिंहासन के आधे भाग पर विराजमान होकर भी जनापवाद के कारण स्वंय ही कौषल्या आदि माताओं और राम को अभिवादन करके लक्ष्मण द्वारा चलित रथ से अयोध्या नगरी को छोड़कर वन के लिए प्रस्थान करती हैं।

सीता कोई साधारण स्त्री न होकर महामुनियों के रक्त से समुद्‌भूत दिव्य ज्योति है महायोगी विदेहराज से प्राप्त विनय और माता पृथ्वी से प्राप्त रत्नरूपदेह की साकार प्रतीक हैं। योग विद्या के कारण समस्त प्राकृतिककष्टों को सहने में समर्थ हैं। ग्रहस्थ आश्रम में रहते हुए वधुभाव से सबको यथोचित आदर सम्मान देते हुए अपनी इच्छा से पति के साथ वन जाकर पतिव्रत धर्म का पालन करती हैं तथा पति द्वारा जनहित के लिए प्राप्त वनवास को सहर्ष स्वीकार कर लेती हैं।

वन में रहते हुए पुत्र जन्म के बाद ऋर्षि के आश्रम में मुनि पत्नीयों, गायों, या हिरनियों आदि की पीड़ा को स्वंय दूर करती हैं। मुनियों का वेश धारण उन्हीं के समान आचरण करती हैं और भूमि पर सोती हैं। स्वंय ही चटाई, वस्त्र आदि बनाती हैं तथा अपने पुत्रों को भी स्वंय सेवा का व्रत सिखाती हैं। दोनों बालकों को शिक्षार्थ कवि वाल्मीकि को सौंपकर सीता सन्यासी वेश धारण कर तप करती हैं और आश्रम में राम के आने पर भी परांड़मुख रहती हैं क्योंकि वशीजनों में त्यक्त वस्तु के प्रति फिर से आसक्ति पैदा नहीं होती। महाकवि द्वारा आयोजित सभा में उपस्थित राम, जनक, माताओं और समस्त साकेत निवासियों द्वारा चलने का अनुरोध किये गये जाने पर भी अपने जीवन का कोई कृत्य शेष न देखकर, उत्तम समय व स्थान जानकर सीता शांत चित्त से स्थिर, सुखद, सम तथा भद्रासन से शोभित पद्‌मासन पुनः लगा लेती हैं। सीता के व्यक्तिगत चित्रण से उनकी सदाश्रयता प्रकट होती है, जो महाकाव्य की कथावस्तु के लिए परम् आवश्यक हैं।

द्विवेदी जी ने अपने महाकाव्य की भूमिका में ऐसा किंचित् भी उल्लेख नहीं किया है कि वे सीता निर्वासन की घटना से व्यथित रहें हैं अथवा इस घटना पर उनका विश्वास नहीं है अथवा उत्तरकाण्ड वाल्मीकि की रचना नहीं हैं। उन्होनें इस सन्दर्भ में अपना मन्तव्य नहीं दिया लेकिन महाकाव्य के इतिवृत्त में सीता निर्वासन के प्रसड़ में सीता के चरित्र को आज के नारीवादी युग के अनुरूप सृजित किया हैं

द्वितीय सर्ग में गुप्तचर द्वारा लोकापवाद की घटना के श्रवण गोचर होने पर राम की विक्रिया को देखकर सीता मूर्च्छित हो जाती हैं। इस स्थिति में राम महागज द्वारा उठाये गये कमलिनी की भांति सीता को उठाते है और राजभवन में आकर माताओं को बुलाने का आदेश देते हैं। माताओं के उपस्थित होने पर राम वज्रतुल्य कठोरवाणी को सभा के समक्ष कहते हैं। उस परूषवाणी को सुनकर माताएं निश्चेष्ट हो जाती है और प्रजा मूक हो जाती है। ऐसी स्थिति में सीता स्वंय धैर्यपूर्वक कहना प्रारम्भ करती हैः–

अस्तु मे भवदभीप्सिता स्थितिर्हन्त कुत्रचिदपि क्षमातले।
विश्वमस्तु तु विशल्यतां गतं काममद्य सह कीर्तिभिस्तव।।[1]

सीता स्वंय ही वनगमन की अनुमति मांगती हैः–

प्राणतोपि यशसि स्पृहागुरूः सूर्यवंशिषु हि या प्रशस्यते।
तां विभाव्य कलूषा स्नुषाडद्या वो याति दूर
मनुमन्यतान्तमाम्।।[2]

राम की विक्रिया को देखकर शायद सीता का अर्न्तमन अदम्य साहस और धैर्य से आप्यायित हो जाता है और वे स्वंय वन में जाने का निर्णय ले लेती है। सीता का यह आचरण भारतीय नारी को भारतीय संस्कृति के शिखर पर प्रतिष्ठिता करने वाला हैः–

यार्मि मातर इतः स्वतस्ततो यामि, यामि विपिनं न मे व्यथा
कीर्तिकायमवितुं सुमानुषा मृत्युतोपि न हि जातु बिभ्यति ।।[3]

सीता लक्ष्मण से उनको अर्थात् स्वंय को वन में छोड़ने के लिए आदेशित करती हैं यथाः–

यान्यहं विपिनमेकला गुरूं त्वं पुरेव परिरक्ष सर्वतः।
त्यक्तधारमपि वारि शैत्यतो विप्रकर्षमिह नैव लिप्सते।।[4]

इन उद्धरणों से हम देखते हैं कि सीता आधुनिक नारी के अनुरूप स्वविवेक से निर्णय लेने में दक्ष है। अपवाद के भय से राम द्वारा गर्भवती का परित्याग किया जाना ही इस महाकाव्य की मूल कथा है। इस परित्याग के कारण समग्र कथावस्तु अग्रसर होती है और सीता का मुनि वेश धारण करके वन में निवास करते हुए उत्थान से परे की स्थिति होकर योगी बन जाना आदि का चित्रण किया गया है। अतः कवि ने अत्यन्त दक्षता पूर्वक अपने लधु कलेवर में समग्र कथा को समाहित करने वाली सीता के चरित्र की उत्कृष्टता को प्रकट करने वाले नाम का चयन किया है।

एतद् विपरीत अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने अपने महाकाव्य 'जानकी जीवनम्' की भूमिका में ही स्पष्ट रूप से अपना मन्तव्य देते हुए लिखा है कि– मैं यह नहीं कहता की सचमुच यह घटना घटी थी अथवा नहीं परन्तु इतना अवश्य मानता हूँ कि रामकथा के आदिस्रष्टा प्राचेतस वाल्मीकि ने न तो सीतानिर्वासन को स्वीकार किया था और ना ही लिखा था महार्षिवाल्मीकि प्रणीत रामायण अयोध्या वर्णन से प्रारम्भ होता है तथा युद्धकाण्ड की फलश्रुति से समाप्त हो जाता है। सारे विवादास्पद प्रसंग (सीता निर्वासन शम्बूकवध आदि) रामकथा की परिधि से बाहर है।[5]

राजेन्द्र मिश्र ने अपने महाकाव्य में सीता निर्वासन की घटना को बहूत सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया है 18 वें सर्ग6 में सीता निर्वासन के समस्त घटनाक्रम को लोकमत द्वारा उत्तमोत्तम प्रकल्प के रूप में प्रस्तुत किया हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि आधुनिक महाकवियों ने सीता निर्वासन के प्रकरण को सर्वथा नवीन रूप में प्रस्तुत किया है। और उनके चरित्र को भारतीय संस्कृति में सर्वोच्च शिखर पर प्रतिष्ठित करने का सराहनीय प्रयास किया हैं।

उन्होंने भारतीय नारी को भारतीय संस्कृति के सर्वोच्च शिखर पर प्रतिष्ठित किया है। सीता ने राक्षस संस्कृति के बीच रहकर भी राक्षस संस्कृति को ग्रहण नहीं किया बल्कि आर्य संस्कृति की रक्षा की है। माता कौशल्या का कथन है कि– 'तू राम और और लक्ष्मण से भी बड़ी है।[13] संस्कृत साहित्य के किसी भी मूर्धन्य विद्वानों ने सीता को राष्ट्रदेवी[14] राष्ट्र का गौरव15 तथा रामायण नामक मन्दिर की देव प्रतिभा16 नहीं कहा है। द्विपेदी जी का यह कथन राष्ट्र की महिमा को बढ़ाने वाला हैं।

इस प्रकर हम देखते हैं कि द्विवेदी जी ने बदलती संस्कृतियों के संक्रमणकाल में सीता चरित्र के माध्यम से समन्वय स्थापित करने का स्तुत्य प्रयास किया है। इस प्रकार महाकावि ने अपनी नित्य नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से सीता के चारित्रिक सौष्ठव को स्वमत्यानुसारेण उन्मीलित करने का श्लाघनीय कार्य किया है। महामहोपाध्याय द्विवेदी जी ने सीतानिर्वासन के सन्दर्भ में सीता के चरित्र को अधुनिक युगीन चेतना के अनुसार उकेरा है। इसके पहले किसी महाकावि ने इस प्रसंग में सीता के चरित्र का रेखाड़न नहीं किया हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *रामचरितमानस तुलसीदास गीता प्रेस, गोरखपुर*
2. *रामायण के कुछ आदर्श पात्र जयदयाल गोयन्दका गीता प्रेस, गोरखपुर*
3. *जानकी जीवनम् राजन्द्र मिश्र वैजन्त प्रकाशन, इलाहाबाद*
4. *भारतीया साहित्य का विन्ट्रनिट्ज मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली सन् 2008*
5. *रामकथा के पात्र डॉ भ. ह. राजूरकर प्रकाशक ग्रन्थम्, रामबाग, कानपुर–12,*